खुशकिस्मत
मृदुला गर्ग

कहानी

खुशकिस्मत

मृदुला गर्ग

खुशकिस्मत

हाथ में दवा का पत्ता थामे, निश्चेष्ट नलिनी सोच रही थी, उससे गलती ठीक कब हुई। अगर यह दवा न खिलाई होती तो क्या नरेंद्र जीवित होता? या आखिरी क्षण अपोलो अस्पताल के डाक्टर से लिया अपॉइंटमेंट रद्द करके वह उसे दूसरे अस्पताल न ले गई होती तो जीवित होता? वहीं के न्यूरोलोजिस्ट ने दवा की मिकदार बढ़ाई थी न? वह सलाह परिवार के परिचित डाक्टर ने दी थी; उन्हीं के दवाखाने से फोन करके अपोलो का अपॉइंटमेंट रद्द करके दूसरे अस्पताल फोन लगाया था। तुरंत समय मिल गया तो ले गई। परिचित डाक्टर पर आस्था थी इसीलिए उनकी सलाह मान कर न?

नहीं... असल बात कुछ और थी। जान कर अनजान बनने का नाटक कब तक करेगी? असल वजह, उसके भीतर कुंडली मारे बैठी दहशत ठीक कब, जो बड़े अस्पतालों के अंदर जाने से रोक देती थी। एक रिश्तेदार को देखने गई थी एक बार तो दिमाग एकदम कोरा, खाली हो गया था। दीखना-सुनना बंद। जड़ जहाँ की तहाँ। एक दरियादिल जवान की मदद से बाहर निकली। अस्त व्यस्त। बाहर आते ही आँखों के आगे अँधेरा छाया कि गिरते-गिरते बची। गिरते-गिरते वह हमेशा बच जाती है, इस मामले में वाकई भाग्यशाली है। कभी हड्डी नहीं टूटी। किसी का सहारा ले उठना नहीं पड़ा; किसी ने लाद कर घर तक नहीं पहुँचाया।

हाँ, एक बार गिरी थी बीच सड़क, दुपहिया स्कूटर से टकरा कर। कसूर सवार का नहीं, उस का था। बीच रास्ते ताजा लिखी कहानी का धाँसू शीर्षक क्या सूझा, अहमक, दोनों तरफ के तेज यातायात से बेखबर, वहीं ठिठक गई। दाईं तरफ से आ रहे स्कूटर सवार ने काफी से ज्यादा कोशिश की पर इतनी जबरदस्त बेवकूफी से टक्कर लिए बगैर न रह पाया। चपेट में आ, वह दूर जा गिरी। नौजवान दिल्ली में नया होगा जो रिवायत के खिलाफ, रफूचक्कर होने के बजाय, रुककर पूछने लगा, "आप ठीक तो हैं?"

बेतरह शर्मसार, वह तीर की तरह उठी, जोरदार आवाज में ठीक होने के साथ गलती सोलह आने, स्कूटर सवार की नहीं, अपनी होने की तस्दीक की। तमाशबीनों की भीड़ छँट गई। किसी तरह लंगड़ाने पर काबू रख, वह सामने कॉटेज एंपोरियम में घुस गई। सोफे पर ढेर हो दरख्वास्त की कि तिपहिया मँगवा दें, सड़क पर फिसल कर खासी चोट आई है। उन्होंने मँगवा दिया। रास्ते में एक्सरे करवा, घुटने में बाल आने की जानकारी ले, पट्टी बँधवा, घर पहुँची। सही अर्थ में उसे गिरना नहीं माना जा सकता था। आखिर गिरना-उठना उसकी अपनी रचना थी। कहें कि वह वास्तविकता नहीं, कहानी थी।

तब की बात और थी। तब उसे खुश होने से डर नहीं लगता था। खूब मजे ले कर छोटे बेटे प्रशांत को घुटने में तरेड़ आने का किस्सा सुनाया था। उसने अपने खास अंदाज में आँख मार कर कहा था, "भाइयों, हमारी माँ एकदम अलग किस्म की पागल हैं!" बड़ा बेटा सुशांत तब अमरीका में नौकरी कर रहा था। वह भी कम बिंदास नहीं था पर प्रशांत और नलिनी कुछ अलग किस्म के दीवाने थे और एक-दूसरे के राजदाँ-दोस्त।

तब की बात और थी। तब प्रशांत था। पर उसके जाने के बाद भी नलिनी कभी ऐसे नहीं गिरी कि उठ न पाए।

नरेंद्र उतना भाग्यशाली नहीं रहा। वह गिरा तो खक्खड़ सड़क पर मुँह के बल और होश गँवा कर। चेहरे पर कई जगह चोट से खून बहा। चार जन उठा कर घर लाए। गनीमत कि गिरा घर के ठीक सामने। शायद बाहर निकलते ही। घर में काम करने वाली वीना से एक अजनबी ने आकर कहा, "एक गिलास पानी ले आओ, सड़क पर कोई बुजुर्ग गिरा पड़ा है।" गई तो पहचाना, यह तो अपने साहब के पिताजी हैं। हाँ, वह दिल्ली में अपने घर के नहीं, पुणे में सुशांत के घर के बाहर सड़क पर गिरा था। वे दोनों बीस दिन के लिए वहाँ गए हुए थे। पहले नरेंद्र नहीं जाता था; वह अकेली जाया करती थी, हर साल, महीनों ले लिए।

हर किसी से कहती, मेरी बहू अभिलाषा, सुशांत की पत्नी, बिल्कुल बेटी की तरह है। कोई कहता, आपकी साड़ी बड़ी सुंदर है, वह चट कहती, "अभिलाषा ने भेजी है। हथकरघे की नुमाइश में जाती है तो मेरे लिए साड़ी, दुपट्टा या कुर्ता खरीद लेती है। मैं खुद अपने लिए खरीदारी नहीं करती, वही करती है। आप तो जानते हैं, आजकल लड़कियाँ कितनी खरीदारी करती हैं, शगल मानिए कि खब्त। वह भी तरंग में आ कर कभी साड़ी खरीद लेती है, कभी सूट या नए ढब का कास्मेटिक। बाद में लगा, उस पर फबा नहीं तो बदलने के बजाय, मुझ से कहती है, आप पर जँचेगा, आप ले लीजिए। बस अपने लिए कुछ खरीदने से मेरी छुट्टी।"

बखान सुन, एक पड़ोसिन ने हँस कर कहा था, "साफ कहिए न, अपनी पुरानी चीजें पकड़ा देती है। आप भी..."

"बिल्कुल नहीं। एक से एक बढ़िया चीज होती है। न जँचे तो साफ कह देती हूँ मैं, नहीं चाहिए।" फिर मुग्ध भाव से जोड़ा था, "वह सोचती है, मैं अब भी जवान हूँ, कभी पैंट और टॉप भेज देती है। सफर में पहन लेती हूँ।"

"खुशकिस्मत हो!" दूसरी ने ओंठ चबा कर कहा था तो वह पसीना-पसीना हो गई थी। अठारह बरस बीत गए, कोई खुशकिस्मत कह दे तो बुरी तरह घबरा जाती है। जब से पत्नी सहित प्रशांत दुर्घटनाग्रस्त